© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 12 Issue: 03 | July - September 2021
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

मेघदूत में निहित प्रेम तत्व की प्रासंगिता

Kuldeep Singh, kuldeepkaushik4545@gmail.com

1) सारांश :-

स्थान और समय की सीमा से बहिर्गमन करने का एक पथ योग है परन्तु उसका द्वितीय पथ प्रेम के अन्तःकरण से भी निकलता है। प्रेम की उदार स्थिति योग एवं समाधि से मिलती-जुलती है। योग की ही भांति देश और काल के क्षेत्र से बाहर निकल कर अतिशय आनन्द की सीमा में समाविष्ट कर देने की क्षमता नर-नारी के प्रेम में समाहित है।

मुख्य शब्द : आनन्द,समाधि,स्वाभाविक,मनमोहक, इत्यादि ।

2) प्रस्तावना :-

प्रेम में भूत से ऊपर उठकर भूतोत्तर होने की शक्ति होती है। रूप के भीतर डूबकर अरू प का सन्धान करने की पवित्र प्रेरणा होती है। एकाकार होने का सबसे सहज, सबसे स्वाभाविक एवं मनमोहक तथा महनीय मार्ग है, लेकिन उदात्त हो जाने पर वह मानव को बहुत कुछ शीतलता प्रदान करता है, जो धर्म का अवदान (देन) है-

धर्मादर्थो अर्थत: काम: कामाद्धर्म-फलोदय:

अर्थात् धर्म से अर्थ, अर्थ से काम और काम से हमें धर्म के ही फल प्राप्त होते हैं। धर्म का जन्म काम के धरातल पर होता है, पर सार्थकता उसकी तब होती है, जब वह ऊपर उठकर आत्मा के धरातल का स्पर्श करता है। वस्तुत : यह श्रृंगार का विलास मात्र है। नदी जैसे स्वभावत: समुद्र की ओर बहती है और समुद्र नदी के साथ आलिंगन करता है, उसी तरह वर्तमान समय में नारी भी महज शारीरिक आकर्षण से आकर्षित हो पुरुष की ओर प्रयाण करती रही है और पुरुष उसे आलिंगनबद्ध कर लेता है। आधुनिकता के नाम पर दोनों के बीच का प्रेम, प्रेम न रहकर वासना-मात्र रह गया है। प्रेम की शालीनता समाप्त हो गई है। वर्तमान समय के नवयुवक एवं नवयुवतियों को महाकवि कालिदास द्वारा उनके महाकाव्यों, नाटकों तथा गीतिकाव्यों में वर्णित प्रेम के आदर्श स्वरूप से बहुत कुछ सीखना आवश्यक है। वास्तव में नर-नारी एक दूसरे को स्पर्श कर सन्तुष्ट नहीं होते । जब दोनों आपस में मिल जाते हैं तब दोनों के अन्तःकरण की शक्ति एक दूसरे को आकर्षित कर दोनों को आबद्ध किये रहती है। आगोचर एवं इन्द्रियातीत के रूप में नारी के अन्तःकरण में एक और नारी रहती है और इस नारी का साहचर्य पुरुष तब पाता है जब शरीर की अन्तर्धारा उछलकर शारीरिक चेतना से परे पवित्र प्रेम की दुरूह समाधि में पहुँचकर निश्चेष्ट एवं निष्किय हो जाती है। पुरुष के अन्तःकरण में भी एक और पुरुष रहता है, जो

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 12 Issue: 03 | July - September 2021
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

शरीर के धरातल से ऊपर उठा हुआ रहता है। महाकवि कालिदास प्रणीत अभिज्ञानशाकुंतलम् नाटक में जब दुष्यन्त एवम् शकुन्तला ने एक दूसरे को देखा तो उनके अन्तःकरण में कविता जाग उठी। सही अर्थ में जीवन के आनन्द एवं उद्देश्य-रहित सुख के जितने भी झरने हैं, वे कहीं-न-कहीं काम के पर्वत से ही प्रस्फूटित होकर आनन्द का प्रादुर्भूत करते हैं। जिनका काम अवरूद्ध है, वे आनन्द के सूक्ष्म भागों से रिक्त रह जाते हैं। दुष्यन्त और शकुन्तला का प्रेम केवल शरीर के धरातल पर ही नहीं रुकता वरन् वह शरीर से प्रादर्भूत होकर प्राण के गोपनीय लोक में प्रवेश करता है तथा रस के भौतिक धरातल से ऊपर उठकर रहस्य एवं आत्मा के अलौकिक अन्तरिक्ष में संचरण करता है। और यह वर्त्तमान संदर्भ में नवयुवक एवं नवयुवतियों के मध्य उत्पन्न होने वाले प्रेम को उदात्त एवं आदर्शमय बनाने का सफल प्रयास करता है। लेकिन वर्तमान भारतीय समाज भौतिक-सौन्दर्य की ओर सरपट भागता चला जा रहा है।

3) प्रेम तत्व की प्रासंगिकता :-

महाकवि कालिदास ने भी अपने काव्य एवं महाकाव्यों में मानव-जीवन के महत्त्वपूर्ण तत्त्व सौन्दर्य का सम्यक् विश्लेषण किया है। उनकी दृष्टि में प्रणय और सौन्दर्य का उपयोग किया जाना ही सार्थक है। महाकवि कालिदास ने 'मेघदूत' नामक गीतिकाव्य में देश-काल एवं पात्र के अनुकूल मेघ के रूप-दर्शन एवं यक्ष-प्रिया के सौन्दर्य का विशद् विश्लेषण किया है। सांसारिक भोगों को भोगता हुआ मेघ कैलास पर पहुंचकर भगवान् शिव की परिक्रमा कर शिव-पार्वती के मणि-तट पर आरोहण के लिए सोपान बनकर अपने को धन्य कर लेता है। ऐहिक भोगों से होकर ही दिव्य आनन्द की उपलब्धि संभव भोग की विधियों में से होकर वह योग के शिखर पर समासीन होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पार्थिव आकर्षणों से गुजरती हुई जीवात्मा अन्तत: भगवान शिव के आनन्दपुर में समाविष्ट हो जाती है। इस प्रसंग में चिन्तन एवं भावों की बहुवर्णता एवं उनकी समतुल्य व्यंजना अवलोकन करने योग्य है।

मानव-जीवन में प्राय: सम्भोग को जनमानस अश्लील मान लेता है। अतएव शरीर के उन-उन भागों को वस्त्रों से आच्छादित कर देता है, जिसके दर्शन एवं स्पर्श से कामोत्तेजना होती है। सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ-साथ अश्लीलता की भावना में भी परिवर्तन होता रहता है। वस्तुत: संभोग व्यापार अपने-आप में अश्लील नहीं होता। इसी के सहारे सृष्टि का कार्य संचलित होता है। लेकिन जीवन-सर्जक संभोग को सामान्य जन अश्लील मानते हैं। किसी मनौवैज्ञानिक ने कहा है कि 'यौन व्यापार संसार में सबसे सुखद प्रतीत होता है। तथापि प्रतिकिया स्वरूप हम मानवों ने उसे घृणित एवं कुरूप कहना शुरू किया है। व्यक्ति के काम-सुख की पूर्ति में समाज बहुत तरह की बाधाएं उत्पन्न करता है, इसीलिए हमारे जीवन में काभ-भावना का अधिकाधिक अवदान होता रहता है।

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 12 Issue: 03 | July - September 2021
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

यही कारण है कि उस अवदमित वासना की व्यक्त चर्चा को हम मानव अश्लीलता की संज्ञा प्रदान कर अपने अचेतन मन में उसे प्यार करते ही रहना चाहते हैं। अन्तःकरण से हम यौन को प्रिय मानते हुए भी बच्चों एवं गुरुजनों के पास इसकी चर्चा तक करना नहीं चाहते। समाज के बीच भी यौन-संबन्धों की चर्चा करने में हम कतराते तो अवश्य है, लेकिन हमारे अन्त: में यौन-विषय अति प्रिय बनकर समाविष्ट रहता है। यौन मानव का अपरिहार्य अंग है, तथा मानव उससे अलग रहने का बाह्य स्वांग करता रहता है। यही कारण है कि जिन उपन्यासों, कहानियों एवं नाटकों में संभोग की जितनी ही अधिक खुलकर चर्चा रहती है, उसकी उतनी ही अधिक बिक्री होती है। उन उपन्यासों या कहानियों में वर्णित यौन विषयक चित्रणों को पढ़ते समय पाठकों की मानसिक दृष्टि काम-सुख का अनुभव करने लगती है। उदाहरण के लिए एक रूसी विद्वान् ने 'लोलिता' नामक उपन्यास में संभोग का खुलकर वर्णन किया है। फलतः लोगों के बीच वह लोकप्रिय हो गया और उसकी काफी बिक्री भी हुई। हिन्दी-साहित्य के विशिष्ट कवि विद्यापति ने तो नवयुवती के स्तन को सोने का महादेव ही बना दिया है तथा उस पर हिलते हुए चिकुर जाल को भगवान् शिव पर झूलते वाला चंवर कहा है। महाकवि कालिदास ने भी 'रघुवंश' में महारानी सुदक्षिणा के स्तनों को कमल मानते हुए उस पर बैठे हुए भौंरों की शोभा का वर्णन किया है-

दिनेषु गच्छत्सु नितान्तपीवरं तदीयमानीलमुखं स्तनद्वयम्।
तिरश्चकार भ्रमराभिलीनयो: सुजातयो: पंकजकोशयो: श्रियम्।।

महाकवि ने पार्वती के उरोज की श्याम मुखता का उल्लेख करते हुए लिखा है-

अन्योन्यम् उत्पीडयत् उत्पलाक्ष्या: स्तनद्वयं पाण्डु तथा प्रवृद्धम्।
मध्ये यथा श्याममुखस्यतस्य मृणाल सूत्रान्तरमप्यलभ्यम्।।

महाकवि विद्यापति ने एक गीत के अन्तर्गत स्तनों के मध्य भाग को सोने के पहाड़ों का सन्धि-स्थल घोषित किया है-

रूप लागत मन धावोल कुचकंचन गिरिसंधि।

रति व्यापार में यौवन जनित सुख सन्निहित रहता है। महाकवि कालिदास की रचनाओं में इसका विशद् स्वरूप अवलोकन करने को मिलता है। यौवन के उत्कट विलास को चित्रित करने के लिए महाकवि ने नगर और गणिका के संभोग से उत्थित सुरभि का वर्णन बड़ा ही मनोहरी ढ़ंग से किया है। सौन्दर्य में समाहित प्रेम में प्रवृष्ट मनुष्य

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 12 Issue: 03 | July - September 2021
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

कदापि कठोर नहीं हो सकता-यह समाज का शाश्वत नियम है। महाकवि कालिदास ने अपने काव्य-महाकाव्यों में इस शाश्वत सामाजिक नियम को रूपायित किया है। राजा दुष्यन्त जब अपनी प्रेयसी शकुन्तला के मुख के पास मड़राते भौंरों को देखकर कहता है कि "**अयि भो! कुसुमलताप्रियातिथे किमत् परिपतनखेदमनुभवसि"।** संस्कृत काव्य की विविध विधाओं में काव्य-कानन-केसरी, कवि कुल-कुमुद-कलाधार महाकवि कालिदास का स्थान अन्यतम रहा है। महाकवि कालिदास एक ऐसे कलाकार रहे हैं। जिनकी भावत्मिक एवं कलात्मिका शक्ति उनकी अद्भुत कवित्व शक्ति को प्रमाणित करने में सफल सिद्ध हुई है। महाकवि कालिदास की हृदय-रज्जिनी कविता की पैशेषता का अवलोकन-विलोकन करके ही महाकवि बाण ने कहा

निर्गतासु ना वा कस्य कालिदास सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मंजरीषु इव जायते ॥

महाकवि कालिदास अपनी कृतियों के कारण विश्व भर में विख्यात है, परन्तु दुर्भाग्य का विषय यह भी बना हुआ है कि मेघदूत गीतिकाव्य पर अनेक टीकाओं के होने के बावजूद संस्कृत के विद्वानों ने महाकवि के अन्तःकरण के सच्चे भावों को समझने का प्रयास नहीं किया है। हिन्दी एवं संस्कृत भाषा में गीति काव्यों के अर्थ, महत्त्व एवं रहस्य को जानते हुए भी पूर्वाग्रहवश महाकवि कालिदास के गीति काव्य मेघदूत के प्रेम-भाव को सही ढ़ंग से समझने का प्रयास नहीं किया गया है।

संस्कृत-साहित्य के गीति काव्यों में महाकवि कालिदास के 'मेघदूतम्' का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। वस्तुतः: यह गीतिकाव्य एक समुज्ज्वल रत्न है जो अपनी मधुरिमा की अनुपम आभा से समस्त संस्कृत-साहित्य को प्रतिबिम्बित करता है। एक सौ इक्कीस श्लोक वाले इस लघु गीति-काव्य में महाकवि ने अपनी प्रखर प्रतिभा, मौलिक-कल्पना, अद्भुत-कवित्व-शक्ति, सृष्टि-निरीक्षण की पटुता, कला की मर्मज्ञता के साथ-साथ साहित्य-रचना कौशल का विशिष्ट परिचय दिया है। महाकवि ने अपने इस सुन्दर सुरम्य काव्य में मार्मिक विरह-व्यथा से युक्त एक विरही यक्ष की विरह जनित करुण कथा का जो सारगर्भित चित्र खींचा है । वह विश्व-साहित्य में बेजोड़ है। प्रणय-सन्देश की ऐसी पावनता का कोई भी कवि चित्रण नहीं कर सका। वस्तुतः गीतिकाव्य के वास्तविक स्वरूप के कारण महाकवि कालिदास का मेघदूत प्रेम-व्यथा से व्यथित उनकी आपबीती एक सच्ची आत्मकथा है। सभी विद्वान एक मत से यह स्वीकार करते हैं कि मेघदूत महाकवि कालिदास के प्रेम -विरह की उदगार स्वरूप रचना है। गीतिकाव्य के लक्षण के अनुरूप मेघदूत में उज्जयिनी के प्रवासी जीवन का गान किया है। गम्भीरता से अध्ययन-मनन करने पर मेघदूत गीतिकाव्य, महाकवि द्वारा कुमारसंभव में शिव-पार्वती रति-सुख के वर्णन द्वारा

दी गई शाप जनित प्रेम-दुख की सच्ची कथा है, जिसमें महाकवि ने किसी यक्ष का रूप जोड़कर अपने हृदय के सच्चे प्रेमिल भावों को मेघदूत के प्रथम श्लोक में ही अति कारुणिक रूप में अभिव्यक्त किया है-

कश्चित् कान्ता विरह गुरूणा स्वाधिकारात्प्रमत्त: ,
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः ।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु ,
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु ॥

संक्षेपत: मेघदूत का पूर्व खण्ड (पूर्वमेघ) पावन प्रकृति के सलिल सौन्दर्य का रमणीय चित्र है, जिसमें मानवीय भावों का सजीव एवं सरस चित्रण बीच-बीच में किया गया है। 'मेघदूत का उत्तर खण्ड (उत्तर मेघ) नैसर्गिक सौन्दर्य के शरीर में निहित मानव हृदय का भावपूर्ण चित्र है। कवि की कमनीय कल्पना की ऊँची उड़ान वहां पर विलासपूर्ण चित्रों में अपने रूचिर रूप में अभिव्यक्त हुई है परन्तु उन सबमें पावन प्रकृति के शाश्वत सत्यों के अनुपम अनुभव की गहरी छाप है। कवि की कमनीय कल्पना का आधार मानव एवम् प्रकृति जगत् में, नगरों और वनों में तथा आकाश एवं पृथ्वी पर सर्वत्र ही सूक्ष्म निरीक्षण द्वारा संकलित प्रचुर सामग्री है। प्रकृति के सभी रूप विशालतम् पर्वत से लघुतम पुष्प तक-मानव एवं देवताओं के समान ही व्यक्तित्व की अनुभूति और जीवन से युक्त है-

अपारे काव्य संसारे कविरेको प्रजापति:।
यथास्मै रोचते विश्वं तथैव परिवर्तते।।

अर्थात् कवि स्वयं प्रजापति होता है। वह अपनी कल्पनामयी दृष्टि के अनुसार अपनी नव नूतन रमणीय निराली सौम्य सृष्टि की रचना करता है। महाकवि कालिदास ने मेघदूत के अन्तर्गत अपनी अनूठी कल्पना का चारूमय चमत्कार दिखाकर नूतन, अद्भूत् और मर्मस्पर्शी कथा का निर्माण कर संसार के समक्ष एक अलौकिक विरह-व्यथा के सहारे सहृदयों के हृदय में एक विचित्र आतुरता और उत्कण्ठा उत्पन्न की है। महाकवि कालिदास के इस गीतिकाव्य मेघदूत के अन्तर्गत कवि के भाव भरे वचनों में हजारों वर्षो का सत्य, शाश्वत प्रेम, विधाता के विधान की अटलता, कमनीय कल्पना, कोमलकान्त पदावली, भावों की सुकुमारता, रसानुकूल-भावाभिव्यंजना, विचारों की उदारता आदि गुणों से समन्वित गीति कला का चूड़ान्त निदर्शन है। महाकवि कालिदास की अलौकिक एवं मौलिक कल्पना के उन्नत शिखर पर स्थित मेघदूत का स्थान अति महत्त्वपूर्ण है।

4) गीति काव्य ही प्रेम भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है :-

© INTERNATIONAL JOURNAL FOR RESEARCH PUBLICATION & SEMINAR
ISSN: 2278-6848 | Volume: 12 Issue: 03 | July - September 2021
Paper is available at http://www.jrps.in | Email : info@jrps.in

गीतिकाव्य ही प्रेम-तीर से घायल दुःखी व्यक्ति के हृदय के सच्चे भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होता है। इसमें किसी पात्र विशेष को आगे करके, उसे मुख्य पात्र बनकार किसी घटना विशेष से जोड़कर अन्तःकरण के प्रेमोद्गार व्यक्त किया जाता है। महाकवि कालिदास ने भी अपने अन्तःकरण के विरह-विदग्ध विचार-भाव को यक्ष के माध्यम से मन्दाक्रान्ता छन्द में वर्णित किया है।

5) निष्कर्ष :-

वस्तुतः: गीतिकाव्य ही कवियों के प्रेम-भाव को व्यक्त करने का सच्चा एवं समुचित माध्यम है। गीति काव्यों में विरह-वेदना की कथा समाहित रहती है। विरह-वेदना से विगलित आंसुओं का हार ही उपहार में प्राप्त होता है। 'मेघदूतम् नामक गीति काव्य भी यक्ष के माध्यम से पत्नी-विरही महाकवि कालिदास की अन्तर्ज्वाला से परिपक्व प्राणों का स्वर गुंजन स्वरूप है। उनके अन्तःकरण का प्रमी यक्ष के माध्यम से अपनी व्यथा प्रस्तुत करता हुआ दीख पड़ता है। महाकवि का अन्तर्दहन शान्त रहते हुए भीतीव्र है।

6) संदर्भ :-

1. अभिज्ञानशाकुन्लतम्, गजेन्द्रगदूकर, सम्पादित, दि पॉपुलर बुक स्टोर, सूरत, 1976

2. अभिज्ञानशाकुन्लतम्-व्याख्याकार-श्रीकृष्णमित्र त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वराणसी, सन् 1911

3. अथर्ववेद का सुबोध भाष्य, भाग 1-4, पं. श्रीपाद् दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, पारडी, जिला-बलसाड, तृतीय संस्करण, 1989

4. अथर्ववेद, अंग्रेजी अनुवाद, अनु. हिवटने, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली

5. अशोक के फूल- डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1987

6. ऋग्वेद, सं. एक मैक्समूलर, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, कलकत्ता, 1982

7. ऋतुसंहारम-कालिदास सं. शिव प्रसादन द्विवेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2004

8. कथासरित्सागर-जगदीश लाल शास्त्री, सम्पादित, मोतीलाल बनारसीदास, बनारस, 1977

9. काव्यमीमांसा, राजशेखर, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना, 1954

10. काव्यलंकारसूत्र, एन.एन. कुलकर्णी, सम्पादित मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1954